श्रीमुनिदेवसूरि रचित
श्रीअभयाभ्युदयमहाकाव्य

सं. **मुनिसुयशचन्द्र-सुजसचन्द्रविजयौ**

अभयकुमार-जैन आगमिक साहित्यनुं बहु ज प्रसिद्ध पात्र छे. तेमना जीवनना प्रसंगोनो उल्लेख के ते संकळायेल होय तेवा प्रसंगो अनुयोगद्वारसूत्र, आवश्यकसूत्र, दशवैकालिकसूत्र, निशीथसूत्र, सूत्रकृतांगसूत्र जेवां आगमसूत्रोमां के तेनी चूर्णि अने वृत्तिमां जोवा मळे छे.

ते सिवाय-महावीरचरित्र, उपदेशप्रासाद जेवा अनेक संस्कृत के प्राकृतभाषाबद्ध ग्रन्थोमां, तथा श्रेणिकरास, श्रेणिक-अभयरास, भरतेश्वर-बाहुबलीरास वगेरे अनेक कृतिओमां अभयकुमारना जीवनना प्रसंगो नोंधायेल छे.

शुभशीलगणिअे रचेल 'भरतेश्वर-बाहुबलीवृत्ति'मां पण अभयकुमारनुं जीवन गद्यमां निबद्ध थयुं छे. ते ज रीते प्रस्तुत कृति पण कृष्णर्षिगच्छना कृष्णमुनिना शिष्य आचार्य जयसिंहसूरिजीअे वि.सं. ९१५मां रचेल 'धर्मोपदेशमाळा' नामनी ९८ श्लोक प्रमाण रचनानी टीकामां स्थान पामी छे.

अभयकुमारना जीवन उपर लखायेल कृतिओ :- तेमना जीवन उपर स्वतन्त्र रीते प्राकृतभाषामां कोई रचना थई होय तेवुं जाणवा मळ्युं नथी. संस्कृत-गुजराती भाषानी रचनाओ नीचे मुजब छे. संस्कृत कृतिओ :-

(१) अभयकुमारचरित्र - सर्ग १२ श्लोक ९०३६ प्रमाणनी कृति चन्द्रगच्छना आचार्य श्रीजिनेश्वरसूरिजीना शिष्य चन्द्रतिलक उपा. द्वारा वि.सं. १३१२मां रचाई छे ते सं. २०४५मां हर्षपुष्पामृतग्रन्थमाळामांथी छपायेल छे.

(२) अभयकुमारचरित्र - सहजकीर्ति (दिगं०?) कृत आ रचनानी विशेष नोंध नथी. आ ग्रन्थ पहेला माणेकचंद हीराचंद भण्डार, चोपाटीमां हतो. हाल ते भण्डार त्यां नथी.

(३) अभयकुमारचरित्र - अज्ञातकर्तृक. आ कृतिनी नोंध जिनरत्नकोशमां छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(४) अभयशतक - आ कृति सुरत-जैनानन्द पुस्तकालयमां होवानी नोंध मळे छे. ते अभयकुमारना जीवन उपर छे के केम ते पण प्रश्न छे ? अप्रगट जणाय छे.

गुर्जरकृतिओ :-

(१) कवि देपाल कृत श्रेणिक - अभयकुमाररास (र.सं. १५२६)

(२) पद्मराज (?) अभयकुमार चरित्र चौपाई (र.सं. १६५०)

(३) कवि ऋषभदास कृत अभयरास (र.सं. १६८७)

(४) जिनहर्ष उपा. (खर.) कृत अभयरास (र.सं. १७५८)

(५) कीर्तिसुन्दर कृत अभयकुमारादि पंचसाधु रास (र.सं. १७५९)

(६) लक्ष्मीविनय (खर.) कृत अभयरास (र.सं. १७६१)

'अभयाभ्युदयमहाकाव्य' नामक प्रस्तुत कृतिने कर्ताए काव्य तरीके गणावी होई तेने स्वतन्त्र कृतिलेखे स्वीकारी शकाय.

अभ्युदयाङ्ककाव्यो : अभ्युदय अेटले उन्नति. शुं नायकना जीवनना अन्य प्रसंगोथी लई छेक तेनी सामाजिक के आत्मिक उन्नतिनी नोंध दर्शावती कृति माटे आ शब्द प्रयोजायो हशे ? के पछी कोई अन्य कारणथी आ शब्द प्रयोजायो छे ते विचारवुं जोईअे.

प्रस्तुत काव्यमां पण अभयकुमारना शैशवथी प्रारंभीने '०मध्यास्त मध्यमविमानमनुत्तरेषु' पदथी कविअे तेमनी आत्मिक उन्नति दर्शावीने कृति पूर्ण करी छे.

अहीं प्रसंगगत केटलांक अभ्युदयाङ्क काव्योनी टूंक नोंध मूकीअे छीअे-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रम	कृतिनाम	कर्ता	र.सं./काळ	कृतिविषय
१.	यादवाभ्युदय (नाटक)	कवि रामचन्द्र	वि. १२मी सदी	कंस–जरासन्धना वध पछी कृष्ण राज्याभिषेक
२.	राघवाभ्युदय (नाटक)	"	"	सीतास्वयंवरघटना
३.	भरतेश्वराभ्युदय	आशाधर (दिगं.)	वि.सं.१२३५–१२९६ वच्चे	भरत राजाना चरित्रनुं वर्णन
४.	धर्माभ्युदय	उदयप्रभ	वि.सं. १२७७–१२९० वच्चे	वस्तुपाले काढेल संघयात्रा वगेरेथी थयेल धर्मना अभ्युदयनुं वर्णन
५.	धर्मशर्माभ्युदय	हरिश्चन्द्र (दिगं.)	वि.सं. १२५७–१२८७ वच्चे	पंदरमा तीर्थंकर धर्मनाथभगवानना जीवननुं वर्णन
६.	धर्माभ्युदय (अेकांकी नाटक)	मेघप्रभाचार्य	वि.सं. १२७३ पहेलां	दशार्णभद्रराजर्षिनी जीवनघटना
७.	रायमल्लाभ्युदय	पद्मसुन्दरगणि	वि.सं. १६२६–१६३९ वच्चे	अकबरना दरबारी शेठ रायमल्ल चौधरी (दिगम्बर)नी विनंतिथी रचायेल २४ जिन चरित्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रम	कृतिनाम	कर्ता	र.सं./काळ	कृतिविषय
८.	पार्श्वाभ्युदय	जिनसेनाचार्य (दिगं.)		पार्श्वनाथ भगवानने थयेल उपसर्गनुं वर्णन–मेघदूतनी समस्यापूर्ति
९.	देवानन्दाभ्युदय	मेघविजयजी उपा. (खर.)	वि.सं. १७२७	विजय देवसूरिजी (तपा.) म. नुं जीवन शिशुपालवधपादपूर्ति
१०.	खीमसीसौभाग्याभ्युदय[1]	रत्नकुशल (तपा.)	वि.सं. १६५०	मंत्री क्षेमराजना पुण्यकार्यनुं वर्णन
११.	पुण्यानन्दाभ्युदय[2]	पुण्यानन्दसूरि (?)	(?)	अनेक महापुरुषोनुं जीवन
१२.	विजयानन्दाभ्युदयकाव्य		२०मी सदी	आत्मारामजी म.नुं जीवनचरित्र
१३.	नेम्यभ्युदय	उदयसूरिजी म.	२० मी सदी	पू. शासनसम्राट् नेमिसूरिजी म.नुं जीवन अपूर्णकृति

१. 'खीमसीसौभाग्याभ्युदय' काव्यनी कोबा संग्रहनी प्रतिनी नकल अमे करेल छे जे वहेली तके पूर्ण करवानी भावना छे. परंतु ते ग्रन्थना सर्ग १ ना श्लोक १ थी ५८ (पत्र १ थी ५) न होई अन्य हस्तप्रतनी आवश्यकता छे.

२. 'पुण्यानन्दाभ्युदय' काव्यनुं प्रेसमेटर पू.आ.म.श्री मुनिचन्द्रसूरिजी म. साहेबे तैयार करेल छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभयाभ्युदयः महाकाव्य के सकलकथा - काव्यसाहित्यना भेदादिनी वात हेमचन्द्राचार्य महाराजे 'काव्यानुशासन' ग्रन्थमां जणावी छे. ते संपूर्ण वात न करता मुख्य वात ज करीअे तो-

महाकाव्य - एक नायकने के तेना कुळने सामे राखी छन्दविशेषथी रचायेल, सर्गबद्ध, संस्कृतादिभाषानिबद्ध, कविसमयनुं पालन करता शब्द-वैचित्र्यादिलक्षणयुक्त जे दीर्घ रचना ते महाकाव्य, जेवा के रघुवंशमहाकाव्य, बुद्धचरित्रादि.

सकलकथा - महाकाव्यनी जेम नायकना पूर्णजीवननुं मात्र वर्णन होय. जेवा के समरादित्यचरित्र, वस्तुपालचरित्रादि.

डो. गुलाबचन्द्र चौधरी जैन साहित्यनो बृहद् इतिहास (भा.६ पृष्ठ २३)मां जणावे छे के 'जैनोना अधिकांश चरित्रकाव्यो आ प्रकारमां (सकलकथामां) समावेश पामे छे.'

छतां कर्ताअे काव्यना दरेक सर्गना अन्ते "इति अभयाभ्युदयनाम्नि महाकाव्ये" ए शब्दो मूक्या छे. वळी मात्र कथा तरफ लक्ष न आपता काव्यने सर्गबद्धता, छन्दोवैविध्य, ऋतुवर्णनादि केटलाक गुणो पण आप्या छे. तेथी आ कृतिनो समावेश उपरोक्त बे पैकी कया प्रकारमां थई शके ते निर्णय विद्वानो ज करी शके.

अभयाभ्युदयः अवलोकन - कर्ताअे अभयकुमारना जीवननी घणी घटनाओने कुल सर्ग ४, श्लोक २०१ नी अंदर गुंथवानो सुन्दर प्रयत्न कर्यो छे. साथे-साथे - अभयकुमारनी माता नन्दाना दोहदनी पिताअे राजा द्वारा करावेल पूर्ति (सर्ग १, श्लोक १८), अभयकुमारना लग्न (१/४०), चेटकराजानी पुत्री सुज्येष्ठाना स्थाने चेल्लणानुं हरण (२/२), कपट करी वेश्या द्वारा अभयने प्रद्योत पासे लाववो (२/४) प्रद्योत पासेथी मळेल ४ वरदाननी समकाळे थयेल मांगणी पूर्ण न थता अभयकुमारनी मुक्ति (२/६५) जेवा केटलाक प्रसंगोनुं संपूर्ण वर्णन न करता श्लोक के श्लोकार्द्धथी अंगुलिनिर्देश करवानुं पण कर्ता भूल्या नथी.

वळी - आ ज कृतिनी समकाळे रचायेल चन्द्रतिलक उपा. कृत अभयकुमारचरित्रमहाकाव्यमां आवता - सुलसाना ३२ पुत्रनी कथा, कुणिक,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेघकुमार, मेतार्य जेवा (अवांतर) प्रसंगो कर्ताअे न लीधा ते स्वाभाविक छे, परंतु अभयकुमारनी बुद्धिप्रतिभाना द्योतक अन्य कथाप्रसंगो पण कर्ताअे समाविष्ट नथी कर्या ते नोंधवुं जोईअे.

उपरोक्त महाकाव्य साथे प्रस्तुत कृतिने उपर-उपरथी मेळवता प्राप्त थयेल नोंध -

(१) अभयकुमारचरित्र महाकाव्यमां अभयकुमारनो जीव माताना गर्भमां आव्यो त्यारे माताए स्वप्नमां ४ दांतवाळो हाथी जोयो (सर्ग १ / श्लो. २८-३३). प्रस्तुत कृतिमां आ नोंध नथी.

(२) महाकाव्यमां अन्तःपुरदहननी पोतानी आज्ञानुं पालन थयेलुं जाणी राजा श्रेणिक मूर्छित थाय छे. त्यारे अभय पिताने सत्य हकीकत जणावे छे. (४/५५-५९) प्रस्तुत कृतिमां आ प्रसंग जुदी रीते वर्णव्यो छे. (४/२८-३३)

(३) महाकाव्यमां अभयकुमार अष्टाह्निका महोत्सवपूर्वक पितानी आज्ञा लईने दीक्षा ग्रहण करे छे. (१२/२१-२४) प्रस्तुतकृतिमां पिता साथे थयेल करार(प्रतिज्ञा)नुं खण्डन थता अभय स्वयं अनुमतिनी अपेक्षा वगर दीक्षा स्वीकारे छे (४/३१-३४). चन्द्रतिलक उपा. आवश्यक चूर्णिकारने अनुसर्या छे, ज्यारे शुभशीलगणि प्रस्तुतकृतिकारनी वातमां सहमत छे.

(४) अहीं, कर्ताअे करेल शियाळानी ऋतुनुं वर्णन (३/१५-१८), रात्रि-चन्द्रोदयनुं वर्णन (३/२५, १/१-४), सूर्यास्तवर्णन (३/२४), राजाने उठाडे छे ते प्रसंगे सूर्योदयनुं वर्णन (४/१४-१८). वगेरे, महाकाव्यनां तेवां वर्णनो करतां जुदां अने रसाळ छे.

(५) कर्ताअे प्रस्तुत कृतिमां - अनुष्टुप, इन्द्रवंशा, इन्द्रवज्रा, उपजाति, उपेन्द्रवज्रा, पृथ्वी, मन्दाक्रान्ता, रथोद्धता, वंशस्थ, वसन्ततिलका, शार्दूलविक्रीडित, शालिनी, स्रग्धरा वगेरे छन्द प्रयोज्या छे.

धर्मोपदेशमाळा - धर्मदासगणी कृत उपदेशमाळा जेवी ज ९८ श्लोक प्रमाण आ कृति कृष्णर्षिना शिष्य जयसिंहसूरिजीअे वि.सं. ९१५ पहेला रची हशे. कर्ता-तेमनो समय-अन्यकृतिओ-तेमनी शिष्य परम्परा वगेरेनी विशेष नोंध मळती नथी. प्रायः तेमना शिष्य जयकीर्तिसूरिजीए ११५ प्राकृत गाथामय 'शीलोपदेशमाळा' ग्रन्थ रच्यो छे.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'धर्मोपदेशमाळा' ग्रन्थ उपर समयान्तरे त्रण टीकाग्रन्थो रचाया छे.

(१) **धर्मोपदेशमाळा-विवरण** - आ ग्रन्थ उपर कर्ताअे पोते ज विवरण प्राकृतभाषामां कर्युं छे. टीकाग्रन्थनुं श्लोकप्रमाण ५७७८ छे. कर्ताअे सं. ९१५ मां भादरवा सुद ५, बुधवार, स्वातिनक्षत्रमां राजा भोजदेवना राज्यमां नागोरजिनालयमां आ विवरण पूर्ण कर्युं छे. प्रस्तुत ग्रन्थनुं सम्पादन सिंघी जैन शिक्षापीठ-भारतीयविद्याभवन-मुंबईमांथी (पुरातत्त्वाचार्य) जिनविजयजीअे वि.सं. २००५मां प्रकाशित कर्युं छे.

(२) **धर्मोपदेशमाळा-विवरण** - प्रस्तुत विवरण हर्षपुरीयगच्छना हेमचन्द्रसूरिजीना पट्टधर विजयसिंहसूरिजीअे वि.सं. ११९१ मां सिद्धराज जयसिंहना राज्यमां बनाव्युं. तेमणे प्रथम विवरणनी कथाओनो विस्तार कर्यो छे. प्राकृतभाषामां रचायेल वृत्तिनुं श्लोकप्रमाण १४४७१ छे. अप्रकाशित आ ग्रन्थनी ताडपत्रीय पोथी पाटण तथा पूना (भाण्डारकर शोधसंस्थान)मां छे.

(३) **धर्मोपदेशमाळा-वृत्ति** - बृहद्गच्छमां वादी देवसूरिजीनी परम्परामां मदनचन्द्रसूरिजीना शिष्य मुनिदेवसूरिजीअे संस्कृतभाषामां ६८०० श्लोक प्रमाण वृत्ती रची. वि.सं. १३२२नी आसपास रचायेल प्रस्तुत वृत्तिनुं देवानन्दसूरिजीना शिष्य कनकप्रभसूरिजीना शिष्य प्रद्युम्नसूरिजीअे संशोधन कर्युं हतुं. अप्रकाशित आ संपूर्ण कृतिनी ताडपत्रीय पोथी पाटणमां छे. कागळ उपर लखेल प्रति छाणी, लिंबडी, वडोदरा-हंसविजयजी संग्रह, पंजाब संग्रह (?), पाटण, सुरत-जैनानन्द वगेरे ग्रन्थालयोमां होवानुं जिनरत्नकोशकारे नोंध्युं छे. 'अभयाभ्युदय-महाकाव्य' आ टीकाग्रन्थनो ज एक अंश छे.

वृत्तिकार - मुनिदेवसूरिजीना जीवन विषे वधु कोई नोंध उपलब्ध नथी. तेमणे सं. १३२२मां शान्तिनाथ चरित्र रच्युं. आ चरित्र तेमणे पूर्णतल्लगच्छना आ. देवचन्द्रसूरिजीअे सं. ११६० मां रचेल १२१०० श्लोक प्रमाणना 'संतिनाहचरिय'ना संक्षेपरूपे बनाव्युं हतुं. अप्रकाशित आ कृतिनी हस्तपोथीओ छाणी, भण्डारकर इन्स्टिटयूट, लींबडी, जेसलमेर, पाटण वगेरे ग्रन्थालयोमां छे.

तेमणे राजगच्छना आ. प्रद्युम्नसूरिजीअे रचेल 'प्रव्रज्याविधान'नी वृत्तिनी प्रथम प्रत लखी हती. पोरवाल शा. शक्तिकुमारना पुत्र आसाहीना कल्याण माटे तेमनी पत्नी शिवादेवी अने पुत्रो बोसिरि, साढल, सांगो, पुण्यसिंहे बनावेल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अष्टापद' नामना चैत्यनी तेमना हाथे प्रतिष्ठा थइ. तेमणे ज आचार्यश्रीने 'शान्तिनाथ चरित्र' बनाववानी विनन्ति करी हती. [जैन परं.नो इतिहास भा.२, पृ. ४५८]

प्रस्तुतसम्पादनमां अमे २ हस्तप्रतोनो उपयोग कर्यो छे.

हस्तप्रत (१) धर्मोपदेशमाळा टीकान्तर्गत – आ ताडपत्रीय प्रत पाटण – संघवी पाडाना भण्डारमां छे. प्रस्तुत कृति खण्ड २ ग्रथान्क ८९मां पत्र ४५३ A थी ४७६ B मां लखायेल छे. प्रत अशुद्ध छे. तेने अमे ता० एवी संज्ञा आपेल छे.

(२) विविधकथासंग्रह – आ प्रत पाटण–हेमचन्द्राचार्य भंडारनी अन्तर्गत लींबडीना पाडाना भण्डारनी छे. प्रत क्रमांक ४००१ छे. एक ज लेखके आ संपूर्ण प्रत लखी हशे. परंतु तेमां ले.सं. वगेरे नोंध थयेल नथी. कदाच आ कथासंग्रहनी अन्य कथाओ पण मुनिदेवसूरिजीनी रचना होई शके. कारण आ कथासंग्रहना दृष्टान्तो धर्मोपदेशमाळाकारे ते ते श्लोकमां मूक्या छे. आ प्रतनी पत्र संख्या ३३ छे. अक्षर सुवाच्य छे. प्रत शुद्ध छे. ते प्रतने अमे का० अेवी संज्ञा आपेल छे.

कथासंग्रहनी कथाओनी नोंध :

क्रम	कथा नाम	श्लोक संख्या	पत्र	धर्मोपदेशमाळामां आवता ते-ते दृष्टान्तनो श्लो. नं.
१.	वंकचूलकथा (सं.)	१०९	१-५B	१९
२.	अभयाभ्युदयमहाकाव्य (सं.)	२०१	५B-१४B	५२
३.	सुभद्राकथा (सं.)	६१	१५A-१६B	१५
४.	दमदत्तकथा (सं.)	२३	१६B-१८A	२३
५.	दत्तशंखायनकथा (?) (सं.)	७५	१८A-२१A	८ (?)
६.	चन्दनबाळा कथा (सं.)	१२२	२१A-२५A	२६
७.	ईलापुत्रकथा (सं.)	३६	२५A-२६A	७
८.	कूरगडु कथा (सं.)	६८	२६A-२९A	३३
९.	भरतकथा (सं.)	२६	२९A-३०A	७
१०.	काष्ठमुनिकथा (सं.)	३१	३०A-३१A	८४
११.	चातुर्मासिकनियमकथा (प्रा.?)	५७	३१B-३३B	आ कथा मूळमां क्यांय मळी नथी.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विविधकथासङ्ग्रहान्तर्गतम्
"अभयाभ्युदयमहाकाव्यम्"

अच्चंतपावभीरू, रज्जं न लयंति दिज्जमाणंपि ।
अभयमहासाला इव, जिणसासणभावियमईया ॥१॥ [आर्या]

पुरा पुरे राजगृहे प्रसेन-जिता[१]ख्ययाऽभूत्क्षितिमानेके ।
महस्विनस्तस्य सुता बभूवुः, श्रीश्रेणिकाद्या मणयो यथाऽब्धेः ॥१॥ [उपजाति]
क एषु राज्यार्ह इति क्षितीशः, परीक्षितुं पायसभाजनानि ।
अन्येद्युरेषामशनाय पङ्क्त्या, व्यमोचयत् ते च ततो निविष्टाः ॥२॥
भोक्तुं प्रवृत्तेषु सुतेषु तेषु, विमोचयामास स सारमेयान् ।
नेशुः कुमारा ध्रुववद्दिने[२] तु, तत्र स्थितः श्रेणिक एक एव ॥३॥
क्षिपन् शुनिभ्यः परभाजनानि, स पायसं स्वं बुभुजे सुखेन ।
तद्वीक्ष्य दध्यौ नृपतिर्मनीषी, यथा तथाऽप्येष निषेत्स्यतेऽरीन् ॥४॥
स्वयं च भोक्ष्यत्ययमात्मराज्यं, राज्यस्य योग्यस्तदयं परे न ।
ध्यात्वेति तेभ्यः स विभज्य देशान्, ददौ सदौचित्यवतां वरेण्यः ॥५॥
श्राक् श्रेणिको मानवशान्निरीय, बेन्नातटं नाम पुरं जगाम ।
श्रान्तो विशश्राम स तत्र भद्रा-भिधस्य हट्टे वणिजां वरस्य ॥६॥
स क्रायकैर्भूरिनरैस्तदानीं, विहस्ततां प्राप वणिक् ततोऽस्य ।
बद्ध्वा पुटीरर्पयता वितेने, साहायकं भूधननन्दनेन ॥७॥
श्रेष्ठी स भूयिष्ठमुपार्ज्य वित्तं, तस्याऽनुभावेन तमित्युवाच ।
अद्याऽतिथिस्त्वं भविताऽसि कस्य, पुण्यात्मनः ? पुण्यनिधेऽभिधेहि ॥८॥
युष्माकमेवेति निशम्य तस्मा-दचिन्तयद्भद्र ! इदं हृदन्तः ।
स्वप्नेऽद्य योऽदर्शि मया सुताया, योग्यो वरः सैव समागतोऽयम् ॥९॥
ध्यात्वेति संवृत्य निजापणं स, निन्ये सहैव स्वगृहं कुमारम् ।
सगौरवं गौरवभाजनस्य, तस्याऽथ चक्रे सवनाऽस(श)नाद्यैः ॥१०॥
शुभे मुहूर्तेऽथ तदीय[३]कन्या-मानन्दकां रूपगुणात् सुनन्दाम् ।
उदूह्य भेजे रमयेव विष्णु-स्तया समं वैषयिकं सुखं सः ॥११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रसेनजित्तत्र नृपः स्थितं तं, विज्ञातपूर्वी प्रणिधि[४]प्रयोगात् ।
आह्वाययामास रुजार्दितोऽथ, क्रमेलकस्थैः पुरुषैर्जवेन ॥१२॥
अमन्दमान्द्यं पितरं स तेभ्यः, श्रुत्वा भृशं बाष्पभरप्लुताक्षः ।
प्रियां वियोगाकुलचेतसं ता-मापृच्छत प्रेमपरैर्वचोभिः ॥१३॥
गोपालकाः पाण्डुरकुड्यवन्तो, वयं पुरे राजगृहे सदा स्मः ।
आह्वानमन्त्रप्रतिमानितीमान्, वर्णान्[५] लिखित्वाऽर्पयति स्म चाऽस्यै ॥१४॥
गतः पुरं राजगृहं ननाम, तमामयग्रस्ततनुं सबाष्पः ।
तुष्टात्ततो वर्णगुरोरतोऽयं, साम्राज्यदीक्षां च जवादवाप ॥१५॥
गते दिवं तत्र महीमहेन्द्रे, श्रीश्रेणिको भूमिभरं बभार ।
साहायकं यस्य भुजो व्यधत्त, भूभारखिन्नस्य भुजङ्गभर्त्तुः ॥१६॥
यस्य प्रतापस्तपनो नवीनः, कोऽपि प्रजादुःखतमोपहर्त्ता ।
द्विड्दुर्यशोराहुमिह स्फुरन्तं, नभस्तले प्रत्युत जग्रसे यः ॥१७॥
आगच्छता तेन यदा विमुक्ता, नन्दा तदा गर्भवती बभूव ।
गर्भानुभावादभयप्रदाने, तस्यास्ततो दोहद उद्बभूव ॥१८॥
स पूरितोऽस्या जनकेन भूपं, विज्ञप्य कालेऽथ नृपप्रिया सा ।
महःसमूहग्लपितप्रदीपं, प्रासूत पूर्वेव रविं तनूजम् ॥१९॥
यद्दोहदो मातुरमुष्य जज्ञे, गर्भे स्थितोऽस्मिन्नभयप्रदाने ।
मातामहेनाऽभय इत्यवादि, ततः कुमाराग्रपदः स नाम्ना ॥२०॥
अधीतविद्यः[६] क्रमतोऽष्टवर्ष-वयाः स केनाऽपि कुतोऽप्यमर्षात् ।
अतर्ज्यतेति त्वमसीह को नु, नामाऽपि बुध्येत पितुर्न यस्य ॥२१॥
नन्दासुतेनाऽभिदधे पिता मे, भद्रः परः प्राह न ते पिताऽयम् ।
त्वन्मातुरेषोऽथ ययौ विलक्षः[७], पार्श्वं जनन्या स जगाद तां च ॥२२॥
तातः क्व मे मातरगात्तयाऽथ,[८] भद्रः पिताऽकथ्यत ते पिताऽयम् ।
न मे सुतेनेत्युदिता जगाद, भूयोऽपि निःश्वस्य सुदीर्घमेषा ॥२३॥
वैदेशिकः कश्चन मां विवाह्य, गर्भस्थितेऽथ त्वयि कैश्चिदेषः ।
पुंभिः समेतैर्विजने विधाय, मन्त्रं ययौ क्वाऽपि मयाधिरूढः ॥२४॥
गच्छंस्तदा किं किमुवाच स त्वां ?, पृष्टाऽभयेनेति ततः सुनन्दा ।
तत्पत्रकं दर्शयति स्म सोऽपि, तद्वाचयित्वेत्यवदत् प्रहृष्टः ॥२५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पिता स मे राजगृहस्य राजा, तन्मातरन्तर्वह मा स्म खेदम् ।
आपृच्छ्य भद्रं तत एष चक्रे, संवाहकं तत्र यियासुराशु ॥२६॥
अम्बां गृहीत्वाऽथ ययौ स राज-गृहे पुरे तां च बहिर्विमुच्य ।
विवेश वेगादभयः सुवेशः, पुरस्य मध्यं स्वयमेक एव ॥२७॥
इतश्च स श्रेणिकभूमिपालः, स्वमन्त्रिणां[१०] पञ्चशतीं निरेकाम् ।
चक्रे चिकीर्षत्यथ तां चतुर्धी - पात्रेण मन्त्रिप्रवरेण पूर्णाम् ॥२८॥
चिक्षेप कूपे विजले नृपः स्वा-मथोर्मिकामेवमघोषयच्च ।
आदास्यते कण्ठगतो य एतां, करेण मन्मन्त्रिषु धुर्यताऽस्य ॥२९॥
श्रुत्वेति तत्कण्ठगतो विलक्षो, जनो जगादेति स पाणिनेमाम् ।
ग्रहीष्यते चन्द्रमसं नभःस्थं, गृह्णाति यः कश्चन भूमिकास्थः ॥३०॥
आगात्तदानीमभयोऽपि कूप-तटे जनं वीक्ष्य जगाद चेति ।
नाऽऽदीयते किं ननु पाणिनेयं, किं दुष्करं किञ्चिदिहाऽस्ति कार्ये ॥३१॥
विलोक्य लोकस्तमिदं हृदन्त-र्दध्यावयं कोऽप्यतिशायिबुद्धिः ।
रागो मुखस्याऽवसरे हि वक्ति, स्फुटं नृणां विक्रममन्तरस्थम् ॥३२॥
जनस्तमूचे त्वमिमां गृहाण, भावी यदि त्वं नृपमन्त्रिमुख्यः ।
तां गोमयस्याऽथ जघान पिण्डे-नाऽऽर्द्रेण मुद्रामभयोऽतिगाढम् ॥३३॥
जाज्वल्यमानैस्तृणपूलकैस्तं, संशोषितं क्षिप्तजले तरन्तम् ।
स पाणिनाऽऽदाय जगाम धाम, भूमीपतेर्द्वाःस्थनरोपहूतः ॥३४॥
नृपस्तमालिङ्ग्य जगाद वत्स !, कुतस्त्वमागा इह वा पुरेऽसि ।
प्रणम्य स प्राह समागतोऽस्मि, बेण्णातटाख्यान्नगरादिहाऽद्य ॥३५॥
भद्रास्य ! भद्राभिधयाऽस्ति तत्र, धनी तदीया तनया सुनन्दा ।
क्षेमं तयोरित्यमुना नृपेण, पृष्टोऽयमस्तीत्यवदत् कुमारः ॥३६॥
भद्रात्मजायाः किमपत्यमस्ति ?, तेनोदितं सूनुरथाऽऽह राजा ।
किमाकृतिः किंगुणसंहतिश्च, स विद्यते ? ह्यमते ! वदेति ॥३७॥
दृष्टः स दृष्टे मयि नाथ ! नूनमिदं निशम्याऽथ नृपः स तस्मात् ।
निन्ये तमालिङ्ग्य सुतं निजाङ्कं, हर्षं वहन्नुद्धुररोमहर्षः ॥३८॥
नृपोऽथ गत्वाऽभिमुखं प्रकृष्टा-नन्दां सुनन्दां पुरमुत्पताकम् ।
प्रवेशयामास चकार चैनं, सुतं प्रधानं सचिवेषु तेषु ॥३९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्रा सुषेणाभिधया नृपस्य, दत्तां स्वकन्यां परिणीय धन्याम् ।
नृपात्मजोऽयं पतियोगजातं, मातुः प्रमोदं द्विगुणीचकार ॥४०॥
न तज्जयन्तेन हरिर्न शेषो, भद्रेण यन्मध्यमलोकपालः ।
सुतेन संसाधयति स्म कार्यं, स तेन[११] दुःसाद्य(ध्य)मपि क्षणेन ॥४१॥
प्रद्योताद्याः क्षितीन्द्राः कति कति न तदा सन्ति शक्तित्रयाद्या-
स्तेषु श्लाघां बुधेभ्यः कलयति पुरतः[१२] श्रेणिकस्त्वेक एषः ।
पुत्रो मन्त्री च यस्याऽगणनगुणनिधिर्भक्तिशक्तिप्रधानो,
धत्ते राज्यस्य भारं मतिविभवभराक्रान्तभूपालचक्रः ॥४२॥ [स्रग्धरा]
दातारं यमुपास्य याचकचमूर्नान्यं वदाऽन्यं गता,
यस्य न्यायविनाकृतो नयनिधेः पुत्रोऽप्यमित्रोपमः[१३] ।
वैरिश्रीजयसङ्गमेन सततं बि[वि]भ्राजमानस्त्रिधा,
वीरश्रेणिशिरोमणिर्विजयते श्रीश्रेणिकः क्ष्मापतिः ॥४३॥ [शार्दूल०]

॥ इत्यभयाभ्युदयनाम्नि महाकाव्ये प्रथमः सर्गः ॥छ॥
ग्र. ६९ अ. १८

ऐँ नमः
[द्वितीयः सर्गः]

इतश्च श्रीविशालाऽस्ति, वैशालीति पुरीवरा ।
तत्र चेटीकृताऽऽराति-र्नृपश्चेटक इत्यभूत् ॥१॥ [अनुष्टुप्]
तत्सुतां चेल्लणाभिख्या-मानीतामपहृत्य सः ।
उषामिवाऽनिरुद्धः श्री-श्रेणिकः परिणीतवान् ॥२॥
भोगांस्तस्याँ[१४] समं भेजे, राजा सोऽथ यथारुचि ।
राज्यभारं समारोप्य, पुत्रे मन्त्रिणि चाऽभये ॥३॥
कपटश्राविकीभूयाऽभयः[१५] पण्यस्त्रियैकया ।
धृत्वाऽऽनीतो विशालायां, प्रद्योतस्य निदेशतः ॥४॥
तदा चाऽवन्तिनाथेन, चेतसीति विचिन्तितम् ।
सुता वासवदत्ता मे, याऽस्त्यङ्गारवतीभवा ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तया योग्य[१६]गुरोरन्ते, शिक्षिताः सकलाः कलाः ।
गन्धर्ववेद एवैको-ऽवशिष्येत गुरुं विना ॥६॥
ध्यात्वेति सचिवं राजा, पप्रच्छेति बहुश्रुतम् ।
को नाम दुहितुर्भावी, गुरुर्गान्धर्वपाठने ॥७॥
प्रायेण राजपुत्रीणां, प्राप्तानां पतिमन्दिरम् ।
विना गीतकलां पत्यु-र्विनोदे किं भवेत्परम् ? ॥८॥
उवाच सचिवः स्वामिन् !, सम्प्रत्युदयनाभिधः ।
राजाऽस्ति सर्वगान्धर्व[१७]-धुरीणानां शिरोमणिः ॥९॥
अद्‌भुता काऽपि गान्धर्व-कला तस्य निशम्यते ।
यो बध्नाति वने व्याला-नपि गीतेन मोहयन् ॥१०॥
वने बध्नाति स यथा, गीतोपायेन कुम्भिनः ।
तथा तस्याऽप्युपायोऽस्ति, बन्धेऽत्राऽऽनयनेऽपि च ॥११॥
तन्वन् यन्त्रप्रयोगेण, क्रिया गत्यासनादिकाः ।
कार्यतां कुञ्जरस्तत्र, किलिञ्जैः काननान्तरे ॥१२॥
किलिञ्जकरिमध्यस्थाः, सुभटाः शस्त्रपाणयः ।
नृपं नियन्त्र्य विश्वस्तं, तमानेष्यन्ति तेऽन्तिके ॥१३॥
तं किलिञ्जगजं तेन, कारितं तद्वनान्तरे ।
वनेचरा विलोक्याऽथो-दयनाय व्यजिज्ञपन् ॥१४॥
दूरं मुक्त्वा परीवारं, गत्वा तस्याऽन्तिकं नृपः ।
गीतं गातुं समारेभे, स तिरस्कृततुम्बरुः ॥१५॥
यथा यथा जगौ गीतं, मधुरं स तथा तथा ।
भटाः करटिनं चक्रु-र्मध्यस्था निश्चलाङ्गकम् ॥१६॥
तं गीतमोहितं मत्वो-दयनोऽपि शनैः शनैः ।
उपेत्योत्प्लुत्य चाऽरोहत्, कुञ्जरं नरकुञ्जरः ॥१७॥
योधैर्निरीय तन्मध्याद्, बध्यमानोऽप्ययं तदा ।
एकोऽशस्त्रश्च नाऽकार्षी-च्छेकः किमपि पौरुषम् ॥१८॥
तमानीतं पुरः प्रद्यो-तोऽपि भूमिपतिर्जगौ ।
शिक्षय त्वं मम सुतां, भद्र ! गीतकलां निजाम् ॥१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्तव्यं समयायात-मिदमप्यधुना मया ।
ध्यात्वेत्युदयनो मेने, कालक्षेपाय तद्वचः ॥२०॥
जगादोज्जयिनीशस्त-मेकाक्षी साऽस्ति मे सुता ।
तत्र वीक्ष्या त्वया येन, त्वां विलोक्य त्रपिष्यते ॥२१॥
नृपस्तामप्युवाचेति, वत्से ! गीतकलागुरुः ।
अपश्यन्त्या त्वया पर्यु-पास्यः कुष्ठी यतोऽस्ति सः ॥२२॥
अथो जवनिकान्तःस्था-मिमामुदयनः सदा ।
शिक्षयामास गान्धर्व-कलामन्तःपुरस्थितः ॥२३॥
तया प्रद्योतभूभर्तुः, शिक्षया तौ परस्परम् ।
नाऽपश्यतां यतश्छेको-ऽप्यतिच्छेकेन वञ्च्यते ॥२४॥
तन्निध्यानधनाऽन्येद्युः, सा कन्या शून्यमानसा ।
अधीते स्माऽन्यथा सर्वाः, मनोधीनाः क्रिया यतः ॥२५॥
काणेति तर्जिता तेन, कुपितेन जगाद सा ।
कुष्ठिनं स्वं न जानासि ? किं मां काणेति भाषसे ? ॥२६॥
अचिन्ति वत्सराजेन, कुष्ठभाग् यादृगस्म्यहम् ।
एकाक्षी तादृगेषाऽपि, स्यात्ततः किं न वीक्ष्यते ? ॥२७॥
अपसार्य ततः काण्ड-पटं मेघविनिर्गताम् ।
लेखामिवैन्दवीमेष, कन्यकां पश्यति स्म ताम् ॥२८॥
तं च वासवदत्तापि, साक्षादिव पतिं रतेः ।
प्रफुल्लाक्षी प्रमोदेन, सुभगं तमवैक्षत ॥२९॥
कन्यां नृपो नृपं कन्या-ऽप्यवलोक्य स्मितं तदा ।
मिथोऽनुरागसाङ्गत्य-सूचकं तेनतुर्मुदा ॥३०॥
युक्तं परिदधे ताभ्यां, रोमाञ्चकवचं तदा ।
यतः सुरतसङ्ग्राम-समयोऽभ्यर्ण एव हि ॥३१॥
प्रद्योततनया बाढं, कामरागवशंवदा ।
दूतीभूतात्मनैवेति, वत्सराजमवोचत ॥३२॥
इयत्कालं कलावन्तं, त्वामवीक्ष्याऽस्मि वञ्चिता ।
पद्मिनीव निशीथिन्यां, नियत्या पितृशिक्षया ॥३३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कलागुरो ! कलाः सर्वा-स्त्वया सङ्क्रामिता मयि ।
इयमेवाऽस्तु तद्दक्ष !, दक्ष(क्षि)णाऽऽत्मसमर्पणम् ॥३४॥
इति तद्वाक्सुधापान-सङ्क्रान्तस्वादुतागुणम् ।
तदनूदयनः प्राह, सप्रमोदमिदं वचः ॥३५॥
छद्मना या पराभूतिः, पुराऽभून्मम वाणिनि ! ।
जज्ञे सैव परा भूति-स्त्वल्लाभेनाऽधुना पुनः ॥३६॥
तत्रैव तस्थुषोर्योग-स्तद्भवत्वावयोः प्रिये ! ।
हृत्वा त्वं समये यास्या-म्यहं निजपुरं पुनः ॥३७॥
इत्थं तयोः स्वदौत्येन, योगः काञ्चनमालया ।
धात्र्या वासवदत्ताया, ज्ञायते स्म परेण न ॥३८॥
वसन्तकेन मिण्ठेन, वत्सराजस्य मैत्र्यभूत् ।
करी नलगिरिः स्वैर-मन्यदोपाद्रवत्पुरम् ॥३९॥
विहस्तेन नृपेणाऽथ, पृष्टः श्रेणिकनन्दनः ।
प्राहेत्यमुं वशीकर्तुं, गायतूदयनो नृपः ॥४०॥
प्रद्योतोक्तः सुतायुक्तो, जवन्यन्तरितोऽथ सः ।
गीतं गायन्नलगिरिं, वशीचक्रे क्षणादपि ॥४१॥
वरं ददौ नृपस्तुष्टो, न्यासीचक्रेऽभयस्तु तम् ।
उद्यानं प्रति चाऽन्येद्यु-श्चचालोज्जयिनीपतिः ॥४२॥
तदेति वत्सराजस्य, मन्त्री यौगन्धरायणः ।
प्रद्योतराजमालोक्य, राजमार्गस्थितोऽवदत् ॥४३॥
यदि तां चैव तां चैव, तां चैवाऽऽयतलोचनाम् ।
न हरामि नृपस्याऽर्थे, नाऽहं यौगन्धरायणः ॥४४॥
भ्रुकुटीभीषणं प्रेक्ष्य, नृपस्याऽऽस्यं स धीसः ।
स्वस्योदयनगृह्यत्व-मपाकर्तुं तदात्वधीः ॥४५॥
उद्ध्र्व एव स सन्त्यक्त-संव्यानो विकृताकृतिः ।
अमूत्रयन्नृपोऽप्येनं, भूताविष्टममन्यत ॥४६॥
उद्यानस्थो नरपति-र्द्रष्टुं गान्धर्वकौशलम् ।
कौतुकी वत्सराजेन, युतामाजूहवत्सुताम् ॥४७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वत्सराजो जगौ राज-पुत्रीमिति तदा प्रिये ! ।
गच्छावः साम्प्रतं भद्र-वतीमारुह्य हस्तिनीम् ॥४८॥
नृपो वसन्तकेनाऽथा-ऽऽनाययत्तां करेणुकाम् ।
गन्तुं सधात्रिका राज-पुत्री सज्जा बभूव च ॥४९॥
दूष्यायां नह्यमानाया-मिभी सा रसितं व्यधात् ।
एको नैमित्तिकस्तच्च, श्रुत्वा रसितमब्रवीत् ॥५०॥
कक्षायां बध्यमानायां, यथा रसति हस्तिनी ।
योजनानां शतं गत्वा, तथा प्राणान् प्रहास्यति ॥५१॥
बबन्ध वत्सराजस्य, वचसा स वसन्तकः ।
इभ्यामूत्रस्य घटिका-श्चतस्रः पार्श्वयोर्द्वयोः ॥५२॥
मिण्ठो राजसुता वत्स-राजो घोषवतीकरः ।
धात्री काञ्चनमाला चाऽऽरुरुहुस्तां द्विपीं ततः[१८] ॥५३॥
यौगन्धरायणो याहि, याहीति करसञ्ज्ञया ।
अनोदयन्नृपं सोऽपि, जुघोषेति व्रजंत(स्त)दा ॥५४॥
वत्सराजो वेगवती-घोषवत्यौ वसन्तकः ।
वासवदत्ता काञ्चन-माला सार्थः प्रयात्यसौ ॥५५॥
गतेषु तेषु नृपतिः, क्रुद्धो नलगिरिं गजम् ।
सन्नाह्यताननुप्रैषीद्, युतं यौधैर्निषादिभिः ॥५६॥
उल्लङ्घ्य पञ्चविंशत्या, योजनैः प्रमितां भुवम् ।
वत्सराजस्तमायातं, पृष्ठेऽपश्यन् महागजम् ॥५७॥
स्फोटयामासिवानेकां, ततो मूत्रघटीमयम् ।
प्रेरयामास च पुन-र्जवेनैतां करेणुकाम् ॥५८॥
जिघ्रन् करेणुकामूत्रं, करी सोऽपि स्थितः क्षणम् ।
पृष्ठे सञ्चारितश्चैषां, कष्टेन महता ततः ॥५९॥
अध्वनि स्फोटयन्नन्या, अपि तावति तावति ।
इभीमूत्रस्य घटिका, गतिं सा करिणोऽरुणत् ॥६०॥
सयोजनशतप्रान्ते, कौशाम्बीमविशत् पुरीम् ।
व्यपद्यत परिश्रान्ता, साऽपि वेगवती द्विपी ॥६१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्मुख्यं योद्धुमायान्तीं, दृष्ट्वोदयनवाहिनीम् ।
तं गजं वालयित्वाऽगु-रवन्तीं ते निषादिनः ॥६२॥
ततः प्रयाणकाकाङ्क्षी, प्रद्योतः कुलमन्त्रिभिः ।
युक्तिपूर्वमिति प्रोचे, स्वस्वामिहितकाङ्क्षिभिः ॥६३॥
वराय यस्मै कस्मैचिद्, दीयते कन्यिका ध्रुवम् ।
तत्समो वत्सराजेन, भावी कोऽस्यौ[१९] वरः परः ? ॥६४॥
पूर्यतां यात्रया तत्ते, मान्यतां स वरो वरः ।
स एव तव कन्याया, यत्कौमारहरोऽजनि ॥६५॥
तैरेवं बोधितो वत्स-राजाय प्रजिघाय सः ।
राजा जामातृभावार्ह-मनर्घं वसुं[२०]सञ्चयम् ॥६६॥
वरेण तेन तैरन्यै-रपि दत्तैस्त्रिभिर्नृपात् ।
स्वं क्रमान्मोचयाञ्चक्रे, मतियोगादथाऽभयः ॥६७॥
तमुवाचाऽभयो राजं-स्त्वया निन्ये छलादहम् ।
दिवा रटन्तं पूर्मध्ये, त्वां तु नेष्याम्यसावहम् ॥६८॥
ततो राजकुमारोऽगा-न्निजं राजगृहं पुरम् ।
कथमप्यवतस्थे च, कञ्चित् कालं महामतिः ॥६९॥
सुरूपे[२१]गणिकायुग्म-युतो वाणिजवेषभृत् ।
अवन्त्यां सोऽगमद् मार्गा-सन्नं च गृहमग्रहीत् ॥७०॥
हस्तिस्थितो गवाक्षस्थे, प्रद्योतः प्रेक्षते स्म ते ।
प्रद्योतमेते अपि तं, सविलासमपश्यताम् ॥७१॥
अनुरक्तो नृपः प्रैषी-दन्तिके दूतिकां तयोः ।
कुपिताभ्यामियं ताभ्यां, वधूभ्यामपहस्तिता ॥७२॥
अनुनेतुमिमे दूती, द्वितीयेऽप्यह्नि साऽगमत् ।
ताभ्यां तत्र दिने स्वल्प-कोपाभ्यां मानिता मनाक् ॥७३॥
अनिर्विण्णा तृतीयेऽपि, दिने साऽर्थयते स्म ते ।
ताभ्यामूचे सदाचारो, भ्राता नौ बिभिय(व)स्ततः ॥७४॥
सप्तमेऽह्नि समायाते, यातेऽमुष्मिंस्ततो बहिः ।
इहाऽभ्येतु नृपो युक्तं, ततः सङ्गो भविष्यति ॥७५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभयोऽथ निजं कञ्चित्, प्रद्योतसदृशं नरम् ।
उन्मत्तमकरोत्तस्य, प्रद्योत इति नाम च ॥७६॥
ग्रहिलोऽयं मम भ्राता, पुरे भ्राम्यति सर्वतः ।
सज्जीकार्यो मयाऽयं त-दित्यवादीज्जनेऽभयः ॥७७॥
नयामि वैद्यगेहेऽमु-मितिच्छद्मपरोऽन्वहम् ।
रटन्तं मञ्चकारूढं, स तं निन्येऽभयो बहिः ॥७८॥
उच्चैः स्वरं स चोन्मत्तो, नीयमानश्चतुष्पथे ।
प्रद्योतं मां हरत्येष, इत्युदश्रुमुखोऽरटत् ॥७९॥
ययौ नृपोऽपि तत्रैकः, प्रच्छन्नं सप्तमेऽहनि ।
बबन्धे चाऽभयभटैः, कामान्धः सिन्धुरो यथा ॥८०॥
वैद्यगेहे नयाम्येनं, जल्पतेत्यभयेन सः ।
जह्रे पुरस्य मध्येन, सपर्यङ्को दिवा रटन् ॥८१॥
प्रतिक्रोशं पुरो मुक्तै-र्वाजिभिः करभैरथैः ।
नृपं राजगृहं निन्ये-ऽभयस्तं भयवर्जितः ॥८२॥
अभयः श्रेणिकस्याऽग्रे, निनायोज्जयिनीपतिम् ।
अधावत्तं प्रति क्रुद्धः, कृष्ट्वाऽसिं श्रेणिको नृपः ॥८३॥
सम्बोध्य मगधाधीश-मभयो नीतिवित्ततः ।
प्रद्योतं प्रेषयामास, सत्कृत्य स्वपुरं प्रति ॥८४॥
सुधर्मस्वामिपादाना-मन्तिके कश्चिदन्यदा ।
प्रव्रज्यामाददे काष्ठ-भारिको भवभीरुकः ॥८५॥
विहरन्तं पुरे पौराः, पूर्वावस्थाऽनुवादतः ।
उपाहसन्नमुं सोऽपि, विहारार्थे जगौ गुरून् ॥८६॥
अन्यत्राऽथ विहाराय, पृष्टो गणभृताऽभयः ।
पृच्छंश्चाऽयं विहारस्य, हेतुं तं ज्ञापितोऽमुना ॥८७॥
स प्रणम्येत्ययाचिष्ट, दिनमेकं प्रतीक्ष्यताम् ।
तदूर्ध्वं भगवत्पादै-र्यथारुचि विधीयताम् ॥८८॥
भाण्डागारात्ततः कृष्ट्वा, रत्नकोटित्रयीमयम् ।
दास्याम्येतामेत लोकाः, पटहेनेत्यघोषयत् ॥८९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्राऽऽययुर्जनाः सर्वे-ऽप्यभयेनेति भाषिताः ।
गृह्णात्विमाः स यो वह्निं, जलं नारीं च वर्जयेत् ॥९०॥
लोकोत्तरमिदं लोके, कर्तुं को नु प्रभुः प्रभो !? ।
तेषु विज्ञपयत्स्वेवं, भूयोऽप्यभिदधेऽभयः ॥९१॥
यदि युष्मासु नेदृक्षः, कोऽपि रत्नान्यमून्यहो ! ।
काष्ठभारिकसाधोस्तत्, सन्तु तत्त्रयवर्जिनः ॥९२॥
सत्यं पात्रमयं दान-स्येदृशस्य महामुनिः ।
धिगस्मान् हसितो यैः स, इत्यूचुरभयं जनाः ॥९३॥
मुनेरस्योपहासाद्यं, तन्न कार्यमतः परम् ।
अभयादिति शिक्षां ते, स्वीकृत्याऽथ जना ययुः ॥९४॥
बुद्ध्या स्वर्गिगुरुस्पर्द्धी-त्यभयः पितृभक्तिभाक् ।
निरीहो धर्ममर्मज्ञो, राज्यं पितुरपालयत् ॥९५॥
श्राद्धधर्मे राजचक्रे, चैष द्वादशधा स्थिते ।
प्रमादं दूरतः कृत्वा, जजागार दिवानिशम् ॥९६॥
अमन्देनाऽपि सा तेन, मतिब्राह्मी सुसङ्गता ।
कस्य चित्रीयते नैव, श्रेयःसिद्धिं वितन्वती ॥९७॥
यथाऽखिलं बाह्यमरातिवृन्दं, मतिप्रपञ्चेन स तेन तेन ।
तथा जिगायाऽऽन्तरमप्यखिन्नो, जितेन्द्रियत्वेन सुदुष्करेण ॥९८॥
[उपेन्द्रवज्रा]

॥ इत्यभयाभ्युदयनाम्नि महाकाव्ये द्वितीयसर्गः ॥छ॥

ऐँ नमः

[तृतीयः सर्गः]

चैत्येऽन्यदा गुणशिले त्रिशलातनूजः,
स्वामी समागमदमर्त्यनिषेवितांह्रिः ।
तत्राऽऽशु निर्मितमथ त्रिदशैर्यथार्हं,
तद्देशनासदनमुद्यदमन्दधाम ॥१॥ [वसन्ततिलका]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्राऽभयोऽथ मुनिपर्षदि नव्यमेकं,
दृष्ट्वा मुनिं विनयवामनमूर्त्तिरुच्चैः ।
नत्वा जिनं विरचिताञ्जलिरित्युवाच,
को नाम धाम तपसां मुनिरेष नाथ !? ॥२॥
प्राह प्रभुः प्रवरमस्ति पुरं प्रतीच्यां,
विश्वप्रसिद्धमरुमण्डलमौलिमौलिः ।
हिङ्ग्वादिपण्यनिवहस्य महानिधानं,
स्थानं श्रियामभय ! वीतभयाभिधानम् ॥३॥
तस्य क्षमाधिपतिरेष उदायनोऽस्म-
द्धर्मोपदेशमधिगम्य भवाद्विरक्तः ।
दध्यौ ददामि यदि राज्यमभीचयेऽहं,
पुत्राय तन्नरकदुःखमयं लभेत ॥४॥
एवं कृपाभयमनास्तनुजेऽथ केशि-
सञ्ज्ञं विधाय नृपमेष सुतं स्वजामेः ।
आदत्त सर्वविरतिं हतकर्मराशे-,
र्भावी भवक्षय इहैव जनुष्यमुष्य ॥५॥
बद्धाञ्जलिः पुनरपि प्रयतः सुनन्दा-
सूनुर्व्यजिज्ञपदिदं शमिनामधीशम् ।
राजर्षिरत्रसमये भविताऽन्तिमः को ? ।
भाव्येष एव जगदे जगदेकभर्त्रा ॥६॥
नत्वाऽथ नाथमभयः पुरमेत्य भूयः,
संसारनाटकनटत्वभयोपगूढः ।
इत्थं जगाद मगधाधिपतिं विवेकी,
भालस्थलप्रणयिपाणिपयोजकोशः ॥७॥
श्रीवर्द्धमानजिननायकपोतवाहं,
चारित्रपोतमधिरुह्य भवाम्बुराशेः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पारं यियासुरहमस्मि ददत्यनुज्ञां,
सद्यः प्रसद्य यदि तातपदा इदानीम् ॥८॥
स्मित्वाऽभ्यधत्त नृपतिः सचिवं तमेव(वं)
वत्स ! त्वयेत्यभिदधे ननु युक्तमेव ।
आदत्स्व किन्तु पुरतो नृपतित्वदीक्षां,
दीक्षां गृहीतुमधुना समयो ममाऽयम् ॥९॥
स श्रेणिकं पुनरुवाच वहामि देव !
शेषामिवाऽहमनिशं शिरसा त्वदाज्ञाम् ।
स्वामी तु वीतभयपत्तननायकं मे,
राजर्षिमन्तिममुदायनमादिदेश ॥१०॥
पुण्योदयेन कृतिनं जनकं भवन्तं,
देवं गुरुं च जिनराजमवाप्य वीरम् ।
दुष्कर्ममर्ममथनं यदि नाऽद्य कुर्वे,
मत्तस्ततः क इव तात ! परोऽस्ति मूढः ? ॥११॥
नाम्नैव तावदभयोऽस्मि बिभेमि भीमा–
दस्मात् पुनर्भवजदुःखभरादपारात् ।
तत्तात ! मां प्रहिणु येन जवेन यामि,
वीरं विभुं भवभृतामभयैकदुर्गम् ॥१२॥
ऊचे नृपस्तदनु तं परिरभ्य पुत्र !,
प्रेम्णा यदेति निगदामि रुषा भवन्तम् ।
आः पाप ! याहि परतः पुरतो मम त्वं,
दीक्षां तदा सपदि वत्स ! समाददीथाः[२२] ॥१३॥
वज्रेण वज्रमिव तत् स्ववचनाऽपि वेध्या,
बुद्ध्याऽऽत्मनो नृपतिबुद्धिरसौ दृढाऽपि ।
एवं विचिन्त्य मतिमानिति सोऽप्युवाच,
तातो यदा दिशति मेऽस्तु तदुत्तमाङ्गे ॥१४॥
जज्ञेऽन्यदाऽथ तुहिनर्तुरतीव जैत्रे,
स्थानानि यत्र परिहृत्य पराणि बाष्पः ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निन्ये निशास्तुहिनसौप्तिकभीविहस्तः,
कान्ताकुचोच्चगिरिदुर्गभुवं प्रविश्य ॥१५॥
स्वं जाड्यभारमपनेतुमिवैति यत्र,
व्योम्नि ह्रुतद्रुतमयं गगनाध्वगोऽपि ।
इत्थं न चेत् कथमहो ! परवासरत्व-
तुल्येऽपि यान्ति दिवसा लघुतां तदीयाः ॥१६॥
तेजो रवेरपि कृशं मयि सप्रतापे,
स्यात् किं तदिद्धमधुनाऽस्य रुषा किलेति ।
मध्यानलं तमभिषेणयितुं चकार,
द्वाराणि योंऽह्रिषु मिषेण विपादिकानाम् ॥१७॥
अर्कत्विषोऽरुणतयाऽनुमिता वसन्ति
माञ्जिष्ठवाससि च वह्निशिखे च यत्र ।
एवं न चेदपरथा कथमेतदीयो,
भोगस्तनोति जडतातनुतां जनेषु ॥१८॥
आगात्तदा मगधराजपुरं सुरङ्गै-(सुरौघै-)
रासेव्यमानचरणो गणिभिर्गणैश्च ।
स्वामी तु दुस्तपतपःकृतकर्ममाथः,
श्रीमानमेयमहिमान्तिमतीर्थनाथः ॥१९॥
श्रीश्रेणिकस्तमभिनन्तुमगादगाध-
भक्तिक्रमोऽथ सह चेल्लणयाऽपरेऽह्नि ।
शुश्राव च श्रुतिसुखप्रदमादरेण,
धर्मं कुकर्ममथनादमुतो जिनेन्द्रात् ॥२०॥
नाथं प्रणम्य नगरं प्रति तौ निवृत्ता-
वेकं जलाशयतटे प्रतिमां दधानम् ।
शीते पतत्यपि निरावरणं मुनीन्द्रं,
जायावती नयनयोरतिथिं व्यधत्ताम् ॥२१॥
उत्तीर्य पुष्परथतस्तमवन्दिषातां,
स्थित्वा क्षणं च तदुपास्तिरसेन तत्र ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एतस्य दुष्करकृतश्चरितं स्तुवन्तौ,
मध्यं पुरो विविशतुर्विशदाशयौ तौ ॥२२॥
वातस्तदा चरमशैलवनात् स कोऽपि
जज्ञेऽन्तरभ्रकगृहं निभृतोऽपि येन ।
निर्वाणमाप सहसा तपनप्रदीपो,
दैवे सुरक्षितमपि क्षयमेति रुष्टे ॥२३॥
अस्तं भास्वति भर्तरीव नियतेर्योगेन यातेऽपरा,
विश्वस्ता वनितेव दुःखनिचिता कृत्वा विलापावलिम् ।
कौसुम्भं त्यजति स्म वारिधिजले, सन्ध्याभ्ररागच्छलात्,
ध्वान्तेनाऽथ शुचा किलाऽऽशु कलिताः सर्वा दिशोऽन्या अपि ॥२४॥
[शार्दूल०]

जगत्तिमिरपीडितं, निखिलमेतदालोकय-
-न्नुदीतकरुणाभरस्त्रिदशनाथदिग्मण्डनात् ।
निरीय जलधेः शनै-रधिरुरोह पूर्वाचलं,
निरीक्षितुमिवौषधीः स्वयमथौषधीनां पतिः ॥२५॥ [पृथ्वी]

इत्यभयाभ्युदयनाम्नि महाकाव्ये तृतीयः सर्गः ॥

ऐँ नमः
[चतुर्थः सर्गः]

पूर्वशैलशिरसः शनैः शनै-र्व्योममध्यमधिगत्य[२३] चन्द्रमाः ।
कौमुदीसमुदयेन सर्वतो, लोकलोचनततीरमोदयत् ॥१॥ [रथोद्धता]
नाशमाप्यत तमोगजासुरः, शम्भुमूर्ध्नि विधुना यदुद्धुरः ।
तत्तदीयमिव लक्ष्म लक्षत-श्चर्मचीवरपदस्थितिं दधौ ॥२॥
नैकमप्यसहनेषु योजनं, स्वीकरोति न स वैरिवारभित् ।
ध्वान्तमिन्दुरुपहन्ति तल्लवं, बिभ्रदङ्कगतमङ्कदम्भतः ॥३॥
छत्रमेककमनङ्गभूभुजः, सार्वभौमपदवीनि[२४]वेदकम् ।
भाति भातिशयपूरितं विधो-र्मण्डलं स्फटिककुण्डलं दिवः ॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रेणिकः परिसमाप्य भूपतिः, सान्ध्यकार्यमनिवार्यवीर्यभूः ।
वासवेश्म घनसारधूपितं, शिश्रिये तदनु चेल्लणासखः ॥५॥ [रथोद्धता]
स्वैरेण सौख्यं रतिजं निषेव्य, दोर्भ्यां मिथस्तौ परिरभ्य सुप्तौ ।
हस्तोऽथ देव्या बहिरावृतेर्द्राक्, निद्राश्लथाश्लेषतया बभूव ॥६॥ [इन्द्रवंशा]
शीतेन तेन व्यथिता करे सा, भृशं वरोरुः समभूद्विनिद्रा ।
निनाय तं संवृतिमध्यमेव, भूयोऽपि शीत्कारकरास्यपद्मा ॥७॥ [उपजाति]
निरावृतिं तं च मुनिं तदानीं, ध्यात्वा कृपालुर्वदति स देवी ।
महानुभावः पततीदृशे हा !, शीतेऽतिरौद्रे भविता कथं सः ? ॥८॥
इत्थं वदन्त्येव नृपप्रिया सा, भूयोऽपि निद्रासुखमाससाद ।
विकल्पदूरीकृतमानसानां, प्रायेण निद्रा सुलभा जनानाम् ॥९॥
शीतत्राणप्रचलनवशा-दल्पनिद्रो नरेन्द्रो,
निद्रामुद्रारहितनयनो ध्यायति स्माऽथ नूनम् ।
सङ्केतोर्वीगतमिति नरं शोचयन्ती स्वरुच्यं,
किञ्चिच्छीतव्यथनमधिकं तस्य सम्भावयन्ती ॥१०॥ [मन्दा०]
बिभ्रदेष इति चेतसि रोषं, गोपतिर्गमयति स्म निशान्तम् ।
प्रायशो भवति वल्लभजानिर्नेर्ष्यया विरहितो विदुरोऽपि ॥११॥ [रथोद्धता]
अत्राऽन्तरे प्रकटवर्णपदां सरागा-मर्णःप्रपूर्णघनगर्जितभीरधीराम् ।
मार्द्वीकपाकमधुरां मगधप्रकाण्डं, वाचं जगाद मगधाधिपबोधनाय ॥१२॥ [वसन्त०]
श्रीज्ञातनन्दनविभुर्भुवनैकभर्ता,
देवस्तव प्रथयतात् पृथुमङ्गलानि ।
तद्वाक्यकृज्जनततिप्रतिबोधकारि[२५]
ब्राहम्यं मुहूर्तमिदमस्तु शिवाय देव ! ॥१३॥ [वसन्त०]
ऽत्तुङ्गमङ्गलमृदङ्गनिनादसङ्गी-
सङ्गीतके प्रसरति क्षितिपालयेषु ।
उत्सङ्गसङ्गिमृगवित्रसनं विभाव्य,
भीतो जगाम चरमाचलमौलिमिन्दुः ॥१४॥
सायं तमोभरकुरङ्गमदेन रात्रौ,
चन्द्रांशुचन्दनरसेन विलेपनं या ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सा सम्प्रति व्यथितशीतभरेण भीता,
पूर्वाङ्गनाऽरुणरुचा घुसृणाङ्गरागम् ॥१५॥
छिन्नाखिलामृतकले परवारिराशे-
रर्द्धोदकं श्रितवति द्विजनायकेऽमी ।
शाखाभृतां शिखरतः खलु दुःखिनः स्वं,
मुञ्चन्ति काकु विरुवन्ति च हि द्विजन्माः ॥१६॥
क्षारेण वार्द्धिपयसा बहुनाऽप्यतृप्तः,
पातुं निरेति मधुरं जलमन्यदेषः ।
श्रीशारदावलयमण्डलमध्यवर्ती,
भानुच्छलेन वडवामुखचित्रभानुः ॥१७॥
देवस्त्रयीतनुरसाविति भानुमन्तं,
युक्तं पुराणगततत्त्वविदो वदन्ति ।
यस्य द्विजा अपि समागमने स्तुवन्तो,
मुञ्चन्ति विष्टरममी निजमीश ! पश्य ॥१८॥
पूर्वं मिलन्ति ककुभस्तिमिरेण नीली-
रागा हसन्ति सह चन्द्रमसा क्षणेन ।
रज्यन्ति बालतपनेन ततस्तदासां
धिक् चञ्चलत्वमिति चञ्चललोचनानाम् ॥१९॥
इत्थं निशम्य मगधाधिपतिर्विसृज्य,
देवीं विरागितमनाः स्वनिकेतनाय ।
आकार्य चाऽभयकुमारममात्यमित्या-
-देशं ददावथ भृशाभिनिवेशभीष्मः ॥२०॥
शुद्धान्त एष निखिलोऽपि मया कुशीलो,
ज्ञातः प्रदीपय तदेनमरे ! जवेन ।
कार्यं त्वयेत्यपरथा न हि मातृमोहा-
दुक्त्वेति नाथमभिनन्तुमयं जगाम ॥२१॥
सोऽथ स्वभावादपि दीर्घदर्शी,
व्यचिन्तयच्चेतसि तातभीतेः[२६] ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुराऽपि जानामि न मे जनन्यः,
शीलं विलुम्पन्ति[२७] युगात्ययेऽपि ॥२२॥ [उपजाति]
तातस्त्वसम्भाव्यतमं विकल्प-ममुं दधौ तत् किमहं करोमि ।
पुरः सरित्पूर इवाऽविषह्यः, कोपो जनानामपि किं नृपाणाम् ? ॥२३॥
कालक्षेपः क्षेमहेतोस्तदस्मिन्, कार्यः किञ्चित्कल्पयित्वाऽप्युपाधिम् ।
कालक्षेपात् कोपसंरम्भ एष, स्वान्ते येन स्वामिनः शान्तमेति ॥२४॥ [शालिनी]
ध्यात्वा धीमानित्ययं तत्समीपे, जीर्णां काञ्चित् कुम्भिशालामधाक्षीत् ।
चक्रे चाऽमुं सर्वतोऽपि प्रघोषं, भूपादेशादेष दग्धोऽवरोधः ॥२५॥
इतश्च वीरप्रभुमित्यपृच्छत्, संयोज्य पाणी मगधाधिराजः ।
आदिश्यतां चेटकपुत्रिकेयं, किमेकपत्नी ? किमनेकपत्नी ? ॥२६॥ [उपजाति]
स्वामी जगादेति नरेन्द्र ! सर्वा, अपि प्रियास्ते ननु शुद्धशीलाः ।
स्मृत्वा पुनश्चेल्लणयेत्यवादि, शीते मुनि तं भविता कथं सः ? ॥२७॥
आकर्ण्येत्यनुतापपूरितमना भूपः धुरं प्रत्यसौ ।
यावद्धावति तावदर्द्धसरणा-वभ्यागतं धीसखम् ।
तं वीक्ष्येति जगाद किं नु विहिताऽऽज्ञा मे त्वया ? सोऽप्यवक्,
चक्रे सा ननु देवशासनमहं नोल्लङ्घये जातुचित् ॥२८॥ [शार्दूल०]
कोपारुणाक्षः क्षितिपस्ततस्तं, जगाद पापिन् ! परतो व्रजाऽऽशु ।
दग्ध्वा स्वमातृः पतितोऽसि नाऽग्नौ, कथं मुखं दर्शयसे निजं त्वम् ॥२९॥
[उपजाति]
नृपोऽप्यनाकर्ण्य गिरं तदीयां, ययौ पुरेऽन्तःपुरमक्षतं तत् ।
विलोक्य जीर्णेभकुटीं च दग्धा-मशंसदुच्चैरभयस्य बुद्धिम् ॥३१॥
पाप ! व्रज त्वं परतो यदीदृक्, प्रोचेऽभयं प्रत्यथ तद्विमृश्य ।
राजा ययौ सान्त्वयितुं सुतं त-मत्युत्सुकः संसदि वीरभर्तुः ॥३२॥
गृहीतदीक्षं तमवेक्ष्य तत्र, भेजे विषादेन भृशं स भूपः ।
अथाऽभयस्तं प्रतिबोधवाक्य-मिदं जगाद प्रहतप्रमादः ॥३३॥
नरेन्द्र ! सन्धावचनं तदात्मनो, विचिन्त्य चेतः कुरु मा विषादयुक् ।
व्रतं मयाऽऽदायि जिनेन्द्रपाणिना, ततस्त्वमप्यत्र भजाऽनुमोदनाम् ॥३४॥ [वंशस्थ]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नत्वा जिनं जिनमुनीनभयं च भक्त्या,
राजा ययौ पुरमथाऽनुशयं[२८] दधानः ।
तप्त्वा तपश्चिरमसावभयोऽपि शस्त-
मध्यास्त[२९] मध्यमविमानमनुत्तरेषु ॥३५॥ [उपजाति]

॥ इति अभयाभ्युदयनाम्नि महाकाव्ये चतुर्थः सर्गः ॥ ग्रं. ५५ अ.१

उभय ग्रं. - २६८ अक्षर-२९. ॥छ॥

पाठान्तरनोंध

१. '०जिदाख्यया'
२. 'दिवे'
३. 'तदैव'
४. 'प्रणिधे(धेः)'
५. 'प्रतिमानवर्णान् पत्रे' इति का.
६. 'अधीनविद्यः'
७. 'विलक्ष्यः' इति का.
८. 'तयाऽद्य'
९. 'मयेऽधिरूढः'
१०. 'सुमन्त्रिणां'
११. 'सुतेन संसाधयति स्म कार्यं, स तेन'
१२. 'परतः'
१३. 'पुत्रोऽपि मित्रोपमः'
१४. 'तस्याः समं'
१५. 'भूय, भूपः' इति का. ।
१६. 'योग्या'
१७. '०गन्धर्व०'
१८. '०च सार्थः प्रयात्यसौ इति का० । श्लो. ५४-५५ का. प्रतौ न
१९. 'कस्या' इति का.
२०. 'अनर्घ्यं वस्तु०'
२१. 'स रूप'
२२. 'समादधीथाः'
२३. '०गम्य'
२४. '०विवेदकम्' इति का. ।
२५. '०वाक्यवज्जनः'
२६. '०भीतः'
२७. 'विमुञ्चन्ति'
२८. 'पुनरथाऽनुशयं'
२९. 'साधु-रध्यास्त'

C/o. हार्दिक ड्रेसिस
५५, चकला स्ट्रीट,
बीजे माळे,
मुम्बई-३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org